IJARSCT

ISSN (Online) 2581-9429

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)

Impact Factor: 6.252

Volume 2, Issue 1, November 2022

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में पंचायती राज व्यवस्था

अम्बिकेश नामदेव

सहायक प्राध्यापक (विधि)

संस्कार विधि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला–अनूपपुर (म.प्र.)

डॉ. ऊषा ठाकुर

डीन प्रोफेसर एण्ड विभागाध्यक्ष (विधि)

शास. शहीद केदार नाथ स्नातकोत्तर महाविद्यालय मऊगंज जिला–रीवा (म.प्र.)

शोध सारांशः भारत गाँवों का देश है और पंचायती राज व्यवस्था गाँवों को चलाने का एक व्यवस्थित और प्रामाणिक स्थानीय स्व–शासन व्यवस्था है, इस लेख में हम पंचायती राज व्यवस्था (Panchayati Raj System) पर सरल और सहज चर्चा करेंगे और इसके सभी महत्वपूर्ण पहलुओं को समझेंगे; इसीलिए लेख को अंत तक जरूर पढ़ें, संक्षिप्त में आपको पंचायती राज व्यवस्था से संबंधित बहुत कुछ जानने को मिलेगा।

मुख्य शब्दः स्वतंत्रता, भारत, पंचायती, राज, व्यवस्था, स्व–शासन व्यवस्था, लोकतांत्रिक, ढांचा।

प्रस्तावनाः

भारत में पंचायत या ग्राम कोई नई अवधारणा या कोई नई व्यवस्था नहीं है बल्कि इसके प्रमाण वैदिक युग से मिलने शुरू हो जाते हैं। जहां कई वैदिक ग्रन्थों में पंचायतन शब्द का उल्लेख मिलता है। हालांकि उस समय ये पाँच आध्यात्मिक लोगों का समूह हुआ करता था। फिर महाभारत और रामायण जैसे धर्मग्रंथों की बात करें तो वहाँ भी ग्राम या जनपद के साक्ष्य मिलते हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ग्राम पंचायतों का उल्लेख मिलता है।

सल्तनत काल के दौरान भी दिल्ली के सुल्तानों ने अपने राज्य को प्रान्तों में विभाजित किया था। जिसे कि वे विलायत कहते थे। फिर ब्रिटिश काल की बात करें तो शुरुआती दौर में तो ग्राम पंचायतों को कमजोर करने की कोशिश की गई लेकिन 1870 के मेयो प्रस्ताव ने स्थानीय संस्थाओं को मजबूत करने की कोशिश की। इसी को आगे बढ़ाते हुए 1882 में लॉर्ड रिपन ने इन स्थानीय संस्थाओं को जरूरी लोकतांत्रिक ढांचा प्रदान किया। इसीलिए लॉर्ड रिपन भारत में स्थानीय स्वशासन का जनक माना जाता है।

इसके बाद उतरोत्तर क्षेत्रीयता को बढ़ावा ही मिला और बहुत सारी शक्तियों को प्रान्तों में स्थानांतरित किया गया। स्वतंत्रता के पश्चात अनुच्छेद 40 में DPSP के तहत पंचायतों का उल्लेख भी किया गया। पर ये एक अनौपचारिक व्यवस्था ही बना रहा। इसे कभी भी संवैधानिक सपोर्ट देने की कोशिश नहीं की गई। भारत के स्वतंत्र होने के लगभग 45 साल बाद पंचायती राज व्यवस्था को “73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992”

के माध्यम से एक संवैधानिक दर्जा दिया गया। हम भारत में पंचायती राज के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को पहले ही समझ चुके हैं। इस शोध पत्र में हम पंचायती राज व्यवस्था लागू होने के बाद की स्थिति, महत्वपूर्ण प्रावधानों, लाभों और कुछ त्रुटियों आदि की चर्चा करेंगे।

पंचायती राज व्यवस्था का विकास

भारत में पंचायती राज शब्द का अभिप्राय ग्रामीण स्थानीय स्वशासन पद्धति से है। यह भारत के सभी राज्यों में, जमीनी स्तर पर लोकतंत्र के निर्माण हेतु राज्य विधानसभाओं द्वारा स्थापित किया गया है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में ये सबसे महत्वपूर्ण कदम है। इस व्यवस्था ने ग्रामीण विकास की दिशा और दशा बदल के रख दी। पर स्वतंत्र भारत में इसकी शुरुआत कुछ अच्छी नहीं रही ढेरों समितियां बनायी गई, हजारों सिफ़ारिशें की गई।

पंचायतों की भूमिकाः

लम्बे संघर्ष के बाद 15 अगस्त 1947 को भारत आजाद हुआ, पर नया संविधान बनाने के लिए संविधान सभा का गठन पहले ही, दिसंबर 1946 में किया जा चुका था। संविधान सभा में जब उद्देश्य और लक्ष्य संबंधी प्रस्ताव पेश किया गया तो उसमें स्वतंत्र भारत में पंचायतों के स्थान, भूमिका आदि का उल्लेख नहीं था। 29 अगस्त 1947 को संसदीय मामलों के मंत्री ने एक ऐसी समिति बनाने का प्रस्ताव रखा जो कि संविधान के मसौदे की समीक्षा कर संशोधन के लिए आवश्यक सुझाव दे सकें। इस कार्य के लिए सात सदस्यों की समिति बनाई गई। इसके सदस्य थे सर्वश्री डॉ. बी. आर. अम्बेडकर, एन. गोपालस्वामी आयंगर, अलादी कृष्णस्वामी अय्यर, के. एम. मुंशी, सैयद मो. साहुला, बी. एल. मित्तर तथा डी.पी. खेतान। समिति द्वारा संशोधित मसौदा संविधान सभा में नवंबर 4, 1948 को प्रस्तुत किया गया। संविधान सभा में बहस का एक मुख्य मुद्दा पंचायतों के स्वतंत्र भारत में स्थान का था। इस पर काफी बहस हुई।

संविधान सभा में गाँधीजी के शिष्य श्रीमान् नारायण ने जब पंचायती राज का गाँधीवादी मसविदा प्रस्तुत किया तो उस प्रस्ताव का सभा के प्रबल वर्ग, जिसमें अम्बेडकर, नेहरु, पटेल तथा आजाद (जिसे ग्रेनविल आस्टिन ने तिकड़ी नेहरु–पटेल, आजाद को कहा है) सम्मिलित थे, ने इसका समर्थन नहीं किया एवं अनौपचारिक रूप से अस्वीकृत कर दिया गया। संविधान सभा में जब इस बात की माँग हुई कि पंचायतों को कोई महत्वपूर्ण भूमिका दी जायेगी तो डॉ. अम्बेडकर ने इसकी खिल्ली उड़ाई थी और कहा था कि पंचायतों ने तो जब भारत पर कोई आक्रमणकारी आया तो अपने ढोर अपने बाड़ों में बंद कर लिए और घरों में घुस गये तथा आक्रमणकारी का कोई मुकाबला नहीं किया। जबकि भारतीय प्रजातंत्र का मूल आधार पंचायती राज है, महात्मा गाँधी ने अपने ग्राम प्रधान देश की वास्तविकता को समक्ष कर ही प्रजातंत्र की सुदृढ़ नींव हेतु पंचायती राज पर अधिक जोर दिया था। गाँधीजी गाँव पंचायत, जिला पंचायत से निर्मित राज्य पंचायत एवं राष्ट्र

पंचायत की संरचना करना चाहते थे। संसद का विकेन्द्रीकरण करके राज्यसभा को समाप्त करके वे दलीय नहीं बल्कि राष्ट्रीय सरकार बनाना चाहते थे, उनकी इच्छा को दृष्टिकोण रखते हुए संवधिान सभा में पंचायती राज का प्रस्ताव के संस्थानम ने (22 नवंबर 1948 को) रखा एवं उसे पारित कराने में उनका सबसे बड़ा हाथ था। उन्होंने शक्तियों के आर्थिक एवं वित्तीय विकेन्द्रीकरण के पक्ष में आवाज उठाई। अनुच्छेद 40 के अनुसार राज्य ग्राम पंचायतों के संगठन के लिए प्रभावी कदम उठायेगा। प्रो. रजनी कोठारी ने भारत में राजनीति में लिखा है कि राष्ट्रीय नेतृत्व का एक दूरदर्शितापूर्ण कार्य था– पंचायती राज की स्थापना। इसकी शुरुआत का श्रेय उन्होंने जवाहर लाल नेहरु को दिया है। पं. नेहरु ने कहा था– गाँवों के लोगों को अधिकार सौंपना चाहिए, उनको काम करने दो, चाहे वे हजारों गलतियाँ करें। इससे घबराने की जरुरत नहीं है। पंचायतों को अधिकार दो। (नेहरु का कुरुक्षेत्र संवाद)

देश आजाद हुआ, संविधान बन गया। पंचायतें उसका अंग बनी। विभिन्न राज्यों में राजनैतिक पार्टियाँ सत्ता में आई। उन्होंने पंचायतें स्थापित करने व उन्हें सशक्त बनाने की बात की। पंचायतें गठित भी हुईं। लेकिन वास्तव में जमीनी तौर पर कुछ नहीं हुआ। कारण यह कि वे सही मायनों में स्वायत्त शासन की संस्थाएँ नहीं बन सकीं।

अगर विभिन्न राज्यों में पंचायतें बनीं भी तो उन पर राज्य का नियंत्रण रहा। कोई कर लगाना हो या अन्य कोई कार्य करना हो, हर बात के लिए सरकार से अनुमति लेनी होती थी और इसमें राज्य स्तर से कोई सहयोग पंचायतों को नहीं मिला। इसलिए जो कार्य पंचायतों को सौंपे गए उन्हें वे पूरा नहीं कर सकीं और कुल मिलाकर सत्ता के विकेन्द्रीकरण की बात कागजों तक सीमित होकर रह गई।

दूसरे, ग्राम स्तर पर पंचायत नेतृत्व के प्रशिक्षण की घोर उपेक्षा की गई। अतः पंचायतों का जो हाल आजादी से पहले था इसमें कोई खास अंतर नहीं आया। हाँ, स्वतंत्र भारत की सरकार ने पंचायतों की आर्थिक स्थिति मजबूत करने के लिए समय–समय पर विभिन्न समितियों का गठन अवश्य किया। अप्रैल 1949 में स्थानीय वित्तानुसंधान समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत की गई और 1953 में कर जाँच समिति की रिपोर्ट। आजादी के बाद योजनाओं का युग शुरू हुआ। देश के सामने ढेर सारी समस्याएँ थीं। सरकार ने गाँवों में अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति का काम स्वयं अपने हाथ में ले लिया। इसलिए 1952 में ग्रामीण विकास के सघन विकास कार्यक्रम की शुरुआत हुई।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952) जैसा कि उपर लिखा जा चुका है कि स्वाधीनता प्राप्ति के बाद राज्यों की सरकारों ने पंचायतों की स्थापना की ओर विशेष ध्यान दिया। वे गाँधीजी के ग्राम–स्वराज्य के स्वप्न को साकार करना चाहते थे। प्रो. रजनी कोठारी का कहना बिलकुल सही है कि राष्ट्रीय नेतृत्व का एक दूरदर्शितापूर्ण कार्य था पंचायती राज की स्थापना। इसमें भारतीय राज व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण हो रहा है और देश में एक–सी स्थानीय संस्था के निर्माण से उसकी एकता भी बढ़ रही है। इसको प्रारंभ करने का श्रेय श्री जवाहरलाल नेहरु को है।

पं. नेहरु का कहना था कि गाँवों के लोगों को अधिकार सौंपना चाहिए। उनको काम करने दो चाहे वे हजारों गलतियाँ करें। इससे घबराने की जरुरत नहीं। पंचायतों को अधिकार दो। पं. नेहरु का यह कथन भी उपयुक्त है कि यदि हमारी स्वाधीनता को जनता की आवाज की प्रति ध्वनि बनना है तो पंचायतों को जितनी अधिक शक्ति मिले, जनता के लिए उतनी ही भल है।

नेहरु को लोकतांत्रिक तरीकों में अटूट विश्वास था। सन् 1952 में उन्हीं की पहल पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम आरंभ हुआ। इसमें काफी संख्या में सरकारी कर्मचारी रखे गये और लम्बे चौड़े दावे किए गयें। यह भी समझा गया कि इस कार्यक्रम में जनता की ओर से सक्रिय रूचि के साथ भाग लिया जायेगा। सामुदायिक विकास कार्यक्रम इसलिए प्रारंभ किया गया था कि आर्थिक नियोजन तथा सामाजिक पुनरुद्धार की राष्ट्रीय योजनाओं के प्रति देश की ग्रामीण जनता को सामुदायिक विकास योजनाओं से दूर ही रखा गया तथा उक्त कार्यक्रमें में जनता की सहभागिता कम थी एवं इसमें सरकारी कर्मचारियों की भूमिका ज्यादा रही। डॉ. रजनी कोठारी ने लिखा है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम की विफलता का मुख्य कारण यह था कि इसे सरकारी महकमें की तरह चलाया गया और गाँवें के विकास की बजाय सामुदायिक विकास की सरकारी मशीनरी के विस्तार पर ही ज्यादा जो दिया गया। सरकारी मशीनरी के द्वारा गाँव के लोगों की मनोवृत्ति को बदलने की आशा की गई जिसका परिणाम यह हुआ कि गाँवों के उत्थान के लिए स्वयं प्रयत्न करने के स्थान पर ग्रामीण जनता सरकार का मुँह ताकने लगी। यही बात एक अमेरिकी लेखक रेनहार्ड बेंडिक्स ने कही है– सामुदायिक विकास की सबसे बड़ी कमजोरी उसका सरकारी स्वरूप और नेताओं की लफ्फाजी थी। एक ओर इस कार्यक्रम के सूत्रधार जनता से आगे आने की आज्ञा करते थे दूसरी ओर उनका विश्वास था कि सरकारी कार्रवाई से ही नतीजा निकल सकता है। कार्यक्रम जनता को चलाया था, लेकिन वे बनाए ऊपर से जाते थें।

1957 में योजना आयोग ने एक अध्ययन दल का गठन किया जो सामुदायिक विकास कार्यक्रमों तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा का अध्ययन कर उनकी कमियों तथा सफलताओं पर अपना प्रतिवेदन दे। इस अध्ययन दल के अध्यक्ष श्री बलवंतराय मेहता थे। इस दल ने सरकार को बताया कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम की बनुनियादी त्रुटि यह है कि जनता का इसमें सहयोग नहीं मिला। अध्ययन दल ने सुझाव दिया कि एक कार्यक्रम को, जिसका कि लोगों के दिन–प्रतिदिन के जीवन से संबंध है, केवल उन लोगों के द्वारा ही कार्यान्वित किया जा सकता है। मेहता अध्ययन दल ने 1957 के अंत में अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और सामुदायिक विकास कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं की तुरंत शुरुआत की जानी चाहिए। इस अध्ययन दल ने इसे लोकतंत्रीय विकेन्द्रीकरण का नाम दिया।

बलवंतराय मेहता कमेटी की रिपोर्ट:

बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट 24 नवंबर 1957 को सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की गई थी। इस समिति को गठित करने का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना था कि लोगों में पंचायतों के प्रति उत्साह क्यों कम

है तथा इस समस्या पर पार पाने के लिए क्या तरीके अपनाए जाने चाहिए।

इस समिति का प्रमुख निष्कर्ष यह था कि आम लोगों को ग्रामीण विकास योजनाओं में भागीदार बनाने के लिए यह आवश्यक है कि योजना व प्राशसनिक सत्ता दोनों का विकेन्द्रीकरण हो। इस रिपोर्ट में पहली बार विकेन्द्रीकरण प्रणाली को हमारे देश ने अपनाया है उसमें प्रत्येक ग्रामीण सक्रिय भाग ले। आम नागरिक यह महसूस करे कि शासन प्रक्रिया में उसका भी योगदान है। रिपोर्ट के अनुसार सामुदायिक विकास व राष्ट्रीय विस्तार–सेवा का विकास इसलिए नहीं हो पाया कि इनमें जन–सहभागिता के तत्व का अभाव था। जनता कार्यकलापों में तभी रुचि लेगी जब उनके लिए प्रतिनिधि सभाएँ गठित हों।

विकेन्द्रीकरण के अर्थ को स्पष्ट करते हुए रिपोर्ट में कहा गया है कि सरकार से कुछ कार्यों व अधिकारों को निचले स्तरों पर हस्तांतरित करना चाहिए तथा निचले स्तरों पर पर्याप्त वित्तीय साधन भी उपलब्ध कराने चाहिए।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के अलावा समिति की रिपोर्ट में कहा गया था कि विकेन्द्रीकरण प्रशासनिक ढाँचा निर्वाचित निकायों के हाथों में होना चाहिए। रिपोर्ट में कहा गया है, ''बिना जिम्मेदारी और अधिकारों के विकास कार्यों में प्रगति नहीं हो सकती। सामुदायिक विकास सही अर्थों में तभी हो सकता है जब समुदाय अपनी समस्याओं को समझें, आवश्यक अधिकारों का प्रयोग कर सकें। इस उद्देश्य से हम शीघ्र ही चुने हुए सांविधिक एवं निर्वाचित स्थानीय निकायों की स्थापना करने की सिफारिश करते हैं और आवश्यक संसाधन, अधिकार तथा प्रधिकार सौंपे जाने की भी सिफारिश करते हैं।''

इन उद्देश्य की पूर्ति के लिए समिति ने निम्न तीन स्तरों पर पंचायती राज व्यवस्था की सिफारिश की– 1. ग्राम पंचायत 2. पंचायत समिति 3. जिला परिषद।

समिति की सिफारिशों के अनुसार ये तीनों स्तर एक–दूसरे से जुड़े होने चाहिए। रिपोर्ट ने पंचायत समिति को इस श्रृंखला की सबसे अहम कड़ी बताया। समिति की राय में इन संस्थाओं को कानूनी दर्जा मिलना चाहिए, इनके अधिकार व कर्त्तव्य साफ–साफ परिभाषित होने चाहिए और इन्हों सरकारी नियंत्रण में नहीं रखा जाना चाहिए।

रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि इन निकायों को अपना कार्य करने के लिए समुचित वित्तीय साधन मिलना आवश्यक है। इसके लिए एक कानून बनाकर आय के कुछ साधन इन्हें सौंप देने चाहिए। इन संस्थाओं द्वारा जिन कार्यों के संपादन की समिति ने सिफारिश की थी, वे हैं– कृषि पशुपालन, सहकारिता, लघु सिंचाई कार्य, ग्रामोद्योग, प्राथमिक शिक्षा, स्थानीय संचार, सफाई, स्वास्थ्य व चिकित्सा तथा स्थानीय सुविधाएँ आदि।

गठन के बारे में समिति के सुझाव इस प्रकार थे, ग्राम पंचायत स्तर पन चुने गए सदस्यों में दो महिलाएँ, एक सदस्य अनुसूचित जाति से व एक अनुसूचित जनजाति से होना चाहिए। ग्राम पंचायत का चुनाव ग्राम सभा द्वारा किया जाए। मध्य स्तर पर सदस्यों का चुनाव ग्राम पंचायतें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से करें। चुने हुए सदस्यों में दो महिलाएँ हों जो बच्चों व महिलाओं के काम में दिलचस्पी लेती हों। इसमें अनुसूचित जाति व

अनुसूचित जनजाति को आरक्षण देने की सिफारिश भी की गई थी। पंचायत समितियों के अधीनों के अलावा सांसद व राज्य विधानसभा के सदस्य भी जिला परिषद के सदस्य होंगे। जिला परिषद् पंचायत समितियों व सरकार के बीच कड़ी का काम करे।

बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट को राष्ट्रीय विकास परिषद ने स्वीकार किया और उसके बाद सभी राज्यों ने तीन स्तरीय पंचायती राज प्रणाली अपनाई। राजस्थान पहला राज्य था जिसने पंचायती राज की शुरुआत की नागौर जिले से पंचायती राज का प्रारंभ भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरु ने 2 अक्टूबर 1959 को किया। इसके बाद इसे आन्ध्रप्रदेश ने 1959 से ही पंचायती राज की शुरुआत की।

पंचायती राज व्यवस्था के विधिवत क्रियान्वयन से देश को अनेक लाभ हुए। पहले तो यह कि देश भर में लोकतांत्रिक व्यवस्था का बीजारोपण हुआ। दूसरे, कुछ हद तक नौकरशाही व जनता के बीच का फासला कम हुआ। तीसरे, ग्रामीण जनता के मन में सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक विकास की भावना जागृत हुई। इसके अलावा, राज्यों में इस व्यवस्था के प्रति उत्साह जागा और कई राज्यों ने अपने यहाँ इस अवस्था का अवलोकन व मूल्यांकन करने के लिए जाँच समितियाँ गठित की। लेकिन कुल मिलाकर यह पंचायती राज व्यवस्था भी जनता की आकांक्षाओं को पूरा नहीं कर सकी। इसके बाद सरकार ने आशोक मेहता समिति गठित की।

12 दिसम्बर सन् 1977 को अशोक मेहता की अध्यक्षता में पंचायती राज समिति का गठन हुआ। समिति के उद्देश्य इस प्रकार थे–

1. राज्यों तथा केन्द्र–प्रशासित क्षेत्रों में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के संबंध में वर्तमान स्थिति का और जिला स्तर से ग्राम स्तर तक पंचायती राज संस्थाओं की कार्यप्रणाली की पुनरीक्षण ताकि कमियों व त्रुटियों का पता लगाया जा सके। मुख्य रूप से संसाधन जुटाने के कमजोर वर्गों के हितों को ध्यान में रखकर ग्रामीण विकास की योजनाएँ बनाने के संबंध में सुझाव देना।
2. चुनाव प्रणाली सहित, पंचायती राज संस्थाओं की गठन पद्धति की जाँच करना तथा पंचायती राज व्यवस्था के कार्य निष्पादन पर उनके प्रभावों का मूल्यांकन।
3. भविष्य में समेकित ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका आदि के संबंध में सुझाव देना।
4. पंचायती राज संस्थाओं को अपनी भावी भूमिका निभाने में समर्थ बनाने के उद्देश्य से उसका पुनर्गठन एवं कमियों व त्रुटियों को दूर करने के उपाय सुझाना।
5. पंचायती राज संस्थाओं, सरकारी प्रशासन तंत्र तथा ग्रामीण विकास में संलग्न सहकारी तथा स्वयं सेवी संस्थाओं के बीच सहयोग पूर्ण संबंध के बारे में सिफारिशें देना।
6. पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी जानेवाली जिम्मेदारियों को निभाने के लिए पर्याप्त धन सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक वित्त संबंधी मामलों सहित, अन्य सिफारिशें देना।

IJARSCT

ISSN (Online) 2581-9429

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)

Volume 2, Issue 1, November 2022

Impact Factor: 6.252

समिति की सिफारिशें इस प्रकार थीं–

1. पंचायतें दो स्तरों पर गठित होनी चाहिए– जिला स्तर पर जिला परिषद तथा मंडल या ब्लाक स्तर पर मंडल पंचायत (समिति ने ग्राम पंचायत स्थापित करने की सिफारिश नहीं की)। औसतन 15,000 से 20,000 तक जनसंख्या पर एक मंडल पंचायत होनी चाहिए। ग्रामों को ग्राम समितियों के माध्यम से मंडल पंचायत में शामिल किया जाना चाहिए। चुनावों में अनुसूचित जाति व जनजाति को उनकी जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। पंचायतों का कार्यकाल 4 वर्ष का होना चाहिए। मंडल व जिला स्तर पर दो ऐसी महिलाओं को भी, जिन्होंने जिला परिषद चुनावों में अधिकतम मत प्राप्त किए हों, परिषद का सदस्य बनाया जाएगा। जिला परिषद विभिन्न समितियों के द्वारा कार्य करेगी। ग्राम सभा का गठन होगा जिसकी दो सभाएँ होंगी। पंचायती राज चुनावों में राजनैतिक दलों की भागीदारी होगी।
2. पंचायतों की कार्य सूची विकास की गतिशीलता के आधार पर निर्धारित होनी चाहिए। विकेन्द्रीकरण को राजनैतिक खैरात या प्रशासनिक रियायत नहीं समझना चाहिए। प्रभावी कार्यान्वयन के लिए राज्य सरकारों को संबंधित स्थानीय स्तरों पर पर्याप्त अधिकारों और कार्यों का विकेन्द्रीकरण करना चाहिए तथा उसी अनुपात में उन्हें वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराए जाने चाहिए। जिला परिषद राज्य के सभी विकेन्द्रीकृत कार्यक्रम संभाले तथा जिला स्तर पर योजना बनाए। पंचायतों को विकास कार्य सौपना तब तक अपूर्ण रहेगा जब तक कि पंचायतों का स्वयं निर्णय लेने और अपनी निजी आवश्यकताओं के अनुसार कार्यक्रम बनाने का अधिकार नहीं दिया जाता।
3. पंचायतों को केवल जनता के विचार जानने की सभा न बनाकर उन्हें उपलब्ध संसाधनों से स्वयं अपने लिये योजना तैयार करने में सक्षम बनाया जाना चाहिये। जिला परिषद जिले की योजना बनाए। जिला स्तर पर जिला योजना बनाने के लिए योग्य समिति का गठन किया जाना चाहिए।
4. पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गों को लाभान्वित करने के लिए कार्यक्रम तैयार करने होंगे।
5. राज्य सरकार के कार्यों को विकेन्द्रीकरण करने के साथ–साथ सभी जिला स्तर के अधिकारी को जिला परिषदों तथा उसके नीचे के स्तरों के अधीन रखना होगा। श्रेणी–1 और श्रेणी–2 का राजपत्रित कर्मचारी वर्ग राज्य सरकार के कैडर में रहें जबकि श्रेणी–3 तथा श्रेणी–4 का कर्मचारी वर्ग पूरी तरह से पंचायती राज सरकारों को हस्तांतरित कर दिया जाए। जिला परिषद के कर्मचारी वर्ग की नियुक्ति स्वतंत्र राज्य तथा जिला स्तर के बोर्डों द्वारा की जानी चाहिए। पंचायतों के लिए अलग से एक मंत्री होना चाहिए।
6. राज्य सरकार द्वारा बजट हस्तांतरित करने के अलावा, पंचायतों को स्वयं भी अपने वित्तीय साधन जुटाने होंगे, तभी वे सही ढंग से अपने दायित्वों को निभा सकती हैं। वसूल किये गये ऐच्छिक करों के

लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। भू–राजस्व पर उपकर, जन्म–दर पर उपकर, स्टांप, शुल्क पर अधिमूल्य, मनोरंजन कर, प्रदर्शन कर पंचायतों को सौंप देने चाहिए। इनमें अधिक प्रतिशत मंडल पंचायतों को होना चाहिएं बाजर, हाट, मंडी, मेले आदि राजस्व के महत्त्वपूर्ण साधन हैं। ये सब पंचायतों को सौंपे जाने चाहिए। पंचायती राज वित्त निगम स्थापित किए जाने चाहिए।

7. मानवीय संसाधन–विकास के उद्देश्य से सरकारी कर्मचारियों और निर्वाचित प्रतिनिधियों के अलग–अलग व संयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने चाहिए। प्रशिक्षण कार्यक्रमों का मूल्यांकन होना चाहिए। महिला मण्डलों के गठन को प्रोत्साहन देना चाहिए। पंचायती राज सरकारों को मजबूत बनाने तथा जन समर्थन जुटाने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं को प्रोत्साहन देना चाहिए।
8. सहकारी समितियों व पंचायती राज संस्थाओं में समन्वय का संबंध होना चाहिए। मण्डल पंचायतों का आधारभूत ढाँचा मजबूत करने के लिए ग्रामीण बैंकों की स्थापना की जानी चाहिए। जिला परिषद व मण्डल पंचायत का नगरपालिकाओं से संबंध स्थापित होना चाहिए। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस समिति ने जिला पंचायती राज व्यवस्था को वास्तव में स्वायत्त शासन की सरकार बनाने के लिए आवश्यक थी। इस समिति ने पंचायतों को विकास संस्थाएँ बनाने के बजाए राजनैतिक संस्थाएँ बनाने की सिफारिश की।

इसी समिति की सिफारिशों के आधार पर पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश तथा जम्मू व कश्मीर राज्यों ने अपने–अपने पंचायत अधिनियमों में अपनी स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर संशोधन किये। लेकिन यह शुरुआती उत्साह सभी राज्यों में अधिक समय तक कायम नहीं रह सका। पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश आदि राज्य भी है जहाँ 1978 से लेकर अब तक नियमित रूप से पंचायतों के चुनाव होते रहे हैं। वहाँ राज्य के बजट का बहुत बड़ा भाग इस संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास पर व्यय हो रहा है।

जी.वी.के. राव की रिपोर्ट (G.V.K. Rao Committee, 1985):

योजना आयोग द्वारा इस समिति का गठन 25 मार्च 1985 करे ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामीण विकास व गरीबी उन्मूलन से संबंधित प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा करने के लिए किया गया था। समिति ने अपनी रिपोर्ट दिसंबर 1985 में प्रस्तुत की। इस समिति ने पंचायतों की आर्थिक स्थिति, उनके चुनाव और कार्य–कलापों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि राज्य सरकारें लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के प्रति उदासीन रही है। अधिकांश राज्यों में पंचायतें शक्ति व अधिकार तथा संसाधनों के अभाव में निष्प्रभावी होती जा रही है।

73वें संविधान संशोधन के जरिये संवैधानिक स्थिति तथा सुरक्षा प्रदान करने के बावजूद पंचायती राज संस्थाओं का काम संतोषजनक और आशानुकूल नहीं रहा। इसकी निम्नलिखित वजहें है–

पर्याप्त वित्त हस्तांतरण का अभाव रू कुछ राज्यों को छोड़ दे तो अधिकतर राज्य वित्त आयोग द्वारा सुझाए गए फ़ंड पंचायती राज व्यवस्था को उपलब्ध नहीं करवा पाते हैं। पंचायत समिति जैसे पद के लिए तो

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
IJARSCT
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, November 2022

मुश्किल से अपने पूरे कार्यकाल के दौरान एक–दो अच्छे काम करने को मिलते है।

सरकारी निधि पर अत्यधिक निर्भरता रू पंचायतें आमतौर पर सरकारी निधि व्यवस्था पर निर्भर होती है। क्योंकि पंचायतों को खुद आय प्राप्त करने के लिए बहुत ही कम विकल्प दिये जाते है, या फिर दिये ही नहीं जाते हैं।

वैसे संविधान ने पंचायतों को कुछ मामलों में कर लगाने की शक्ति दी है पर बहुत कम ही पंचायतें कर लगाने तथा वसूलने के अपने वित्तीय अधिकारों का प्रयोग करती हैं। क्योंकि अक्सर जिन लोगों के बीच रहते हैं उनसे कर वसूलना मुश्किल होता है।

ग्राम सभा की स्थिति रू संविधान में ग्राम सभा की भूमिका को प्रमुखता से बताया गया है पर कई राज्यों ने ग्राम सभाओं के अधिकारों को स्पष्ट ही नहीं किया हैं। स्थिति तो ये है कि कई ग्राम पंचायतों को तो ये भी पता नहीं है कि ग्राम सभा नाम की भी कोई चीज़ होती है।

कमजोर संरचनारू देश केअनेकों ग्राम पंचायतों में पूर्णकालिक सचिव नहीं होते। उससे भी बड़ी बात की लगभग 25 प्रतिशत ग्राम पंचायतों के पास अपने कार्यालय भवन या पंचायत भवन तक नहीं होते। इसके अलावा इसके पास तथ्यों, आंकड़ों आदि को सहेज कर रखने की व्यवस्था नहीं होती।

भ्रष्टाचार और नौकरशाही की अनावश्यक हस्तक्षेपरू ब्लॉक या पंचायतों के स्तर पर आमतौर पर भ्रष्टाचार संबंधी कोई ऑडिट नहीं होती इसीलिए यहाँ भ्रष्टाचार अपने उच्च स्तर पर होता है, इसके अलावा अधिकारी किसी योजना को तभी स्वीकृति देते हैं जब उसे कुछ कमीशन मिलता है।

अधिकांश पंचायती राज संस्थाओं के अधिकतर सदस्य अर्द्ध–शिक्षित होते है और उचित प्रशिक्षण के अभाव में ये अपनी भूमिका, जिम्मेदारी, कार्यप्रणाली तथा व्यवस्था के बारे में अनभिज्ञ रहते हैं।

ये रहा पंचायती राज व्यवस्था (च्ंदबींलंजप तंर ॅलेजमउ), उम्मीद है समझ में आया होगा। इस शोध आलेख से संबन्धित एक और महत्वपूर्ण लेख है, उसे भी जरूर पढे, लिंक नीचे दिया जा रहा है।

संदर्भ स्रोत

1. अवस्थी, डॉ. आनन्द प्रकाश – मध्यप्रदेश में स्थानीय प्रशासन
2. माहेश्वरी, डॉ. एस. आर. – भारत में स्थानीय शासन
3. खेत्रपाल/जिन्दल – मध्य प्रदेश पंचायती राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम
4. जोशी, डॉ. आर.पी. मंगलानी डॉ. रूपा– भारत में पंचायती राज
5. The Indian Law Institute Journal.
6. www.wikipedia.org.
7. www.rajpanchyat.gov.in
8. www.rural.nic.in